

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 11 अध्याय 5: कलि में पावन नाम

17 September 2026



राजा निमि दो अन्तिम प्रश्न पूछते हैं — जो भगवान् से विमुख हो जाते हैं उनकी गति क्या होती है, और भगवान् संसार के प्रत्येक युग में किन रूपों में पूजे जाते हैं। ऋषि चमस तथा करभाजन उत्तर देते हैं, और उनका उत्तर एक तेजस्वी शिखर तक पहुँचता है: इसी कलियुग में भगवान् के पावन नामों का सम्मिलित संकीर्तन ही उनकी उपासना का सर्वश्रेष्ठ साधन घोषित किया जाता है।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है, जो श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं तथा शिक्षाओं के माध्यम से एक भक्तिपूर्ण यात्रा है। भगवान् की माया-शक्ति, उससे परे का मार्ग, तथा उनके अवतारों की अद्भुत लीलाएँ सुनकर, राजा निमि अब अपने महान् प्रश्नों में से अन्तिम पूछते हैं: जो भगवान् की उपेक्षा करते हैं उनकी क्या गति होती है, और वे संसार के चार युगों में किन रूपों, नामों तथा विधियों से पूजे जाते हैं? ऋषि चमस पहले का उत्तर गम्भीर करुणा से देते हैं; ऋषि करभाजन दूसरे का उत्तर एक बढ़ते हुए आनन्द से देते हैं जो कलियुग में पावन नाम की महिमा में अपने शिखर तक पहुँचता है। उनके वचनों के साथ वह प्राचीन संवाद पूर्ण होता है, और नारद कोमलता से अपना स्मरण द्वारका में वसुदेव की ओर लौटा लाते हैं।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भगवत महापुराण
- स्कन्ध: 11 (एकादश स्कन्ध)
- अध्याय: 5 (पंचम प्रवचन)
- अध्याय शीर्षक: नारद वसुदेव को अपना उपदेश पूर्ण करते हैं
- प्रधान वक्ता: ऋषि चमस तथा करभाजन, राजा निमि को उत्तर देते हुए; समस्त संवाद नारद द्वारा वसुदेव को स्मरण कराया गया तथा सुकदेव गोस्वामी द्वारा राजा परीक्षित को कहा गया
- प्रधान श्रोता: राजा निमि तथा उनकी सभा; ढाँचे के भीतर, वसुदेव तथा राजा परीक्षित
- मुख्य स्थान: प्राचीन अजनाभ (भारतवर्ष) में राजा निमि का यज्ञ-स्थल
- केन्द्रीय विषय: जो भगवान् की उपेक्षा करते हैं उनकी गति, तथा सत्य, त्रेता, द्वापर एवं कलि युगों में भगवान् के रूप, नाम तथा उपासना-विधियाँ — पावन नाम के कीर्तन की महिमा में परिणत होती हुई
- प्रधान श्लोक-सीमा: स्कन्ध 11, अध्याय 5, श्लोक 1-42
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भगवत महापुराण

पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 4 में, ऋषि द्रुमिल ने राजा निमि को भगवान् के अनेक अवतारों तथा प्रत्येक में की गई अद्भुत लीलाओं का वर्णन किया। अब राजा एकत्रित ऋषियों के समक्ष अपने अन्तिम प्रश्न रखते हैं, और चमस तथा करभाजन — नौ योगीन्द्रों में से अन्तिम दो — महान् उपदेश को पूर्ण करते हैं।

राजा निमि उनके विषय में पूछते हैं जो भगवान् की उपेक्षा करते हैं

राजा निमि ने पूछा कि उनकी क्या गति होती है, जिनके मन तथा इन्द्रियाँ असंयत हैं और कामनाएँ अतृप्त हैं, तथा जो सामान्यतः भगवान् श्रीहरि की आराधना नहीं करते (श्लोक 1)।

चमस बोलते हैं — विमुखता का संकट

ऋषि चमस ने उत्तर दिया कि भगवान् के मुख, भुजाओं, जंघाओं तथा चरणों से चार वर्ण, आश्रमों अर्थात् जीवन की अवस्थाओं सहित, अपने गुणों के अनुसार विभक्त होकर उत्पन्न हुए।

मुखबाहूरुपादेभ्यः पुरुषस्याश्रमैः सह ।

चत्वारो जज्ञिरे वर्णा गुणैर्विप्रादयः पृथक् ॥ २ ॥

*mukha-bāhūru-pādebhyaḥ puruṣasyāśramaiḥ saha catvāro jajñire varṇā guṇair viprādayaḥ
pṛthak*

अर्थ: परम पुरुष के मुख, भुजाओं, जंघाओं तथा चरणों से चार वर्ण, जीवन की अवस्थाओं सहित, अपने-अपने गुणों के अनुसार पृथक् रूप में उत्पन्न हुए। (स्कन्ध 11, अध्याय 5, श्लोक 2)



परम पुरुष के मुख, भुजाओं, जंघाओं तथा चरणों से समाज के चार वर्ण तथा जीवन की अवस्थाएँ उत्पन्न होती हैं, जो सब भगवान् की सेवा तथा आराधना के लिए हैं (श्लोक

2)।

इनमें से, चमस ने कहा, जो भगवान् को अपना मूल तथा शासक जानते हुए भी उनकी उपेक्षा करते हैं, वे अपने स्थान से गिर जाते हैं। अनेक, जो भगवान् की महिमा के श्रवण तथा कीर्तन से दूर हैं, भक्तों की करुणा के पात्र हैं। द्विज भी, जो जन्म तथा संस्कार से भगवान् के निकट हैं, तब भ्रमित हो जाते हैं जब वे वेदों को केवल कर्म-फल के लिए पढ़ते हैं, उनका गूढ़ अर्थ चूककर; अनर्जित विद्या के अभिमान से फूले, रजोगुण तथा अहंकार से आविष्ट, कुछ तो भगवान् के भक्तों तथा स्वयं भगवान् का भी उपहास करते हैं। शरीर तथा उसके सम्बन्धों में आसक्त, दूसरों से द्वेष करते हुए जिनमें वही आत्मा निवास करती है, और इस प्रकार भगवान् से ही द्वेष करते हुए, ऐसी आत्माएँ अन्धकार में गिरती हैं; भगवान् से विमुख, उन्हें अन्ततः घर, धन, सन्तान तथा मित्रों को छोड़कर एक आनन्दहीन दशा में प्रवेश करना पड़ता है (श्लोक 3-18)।



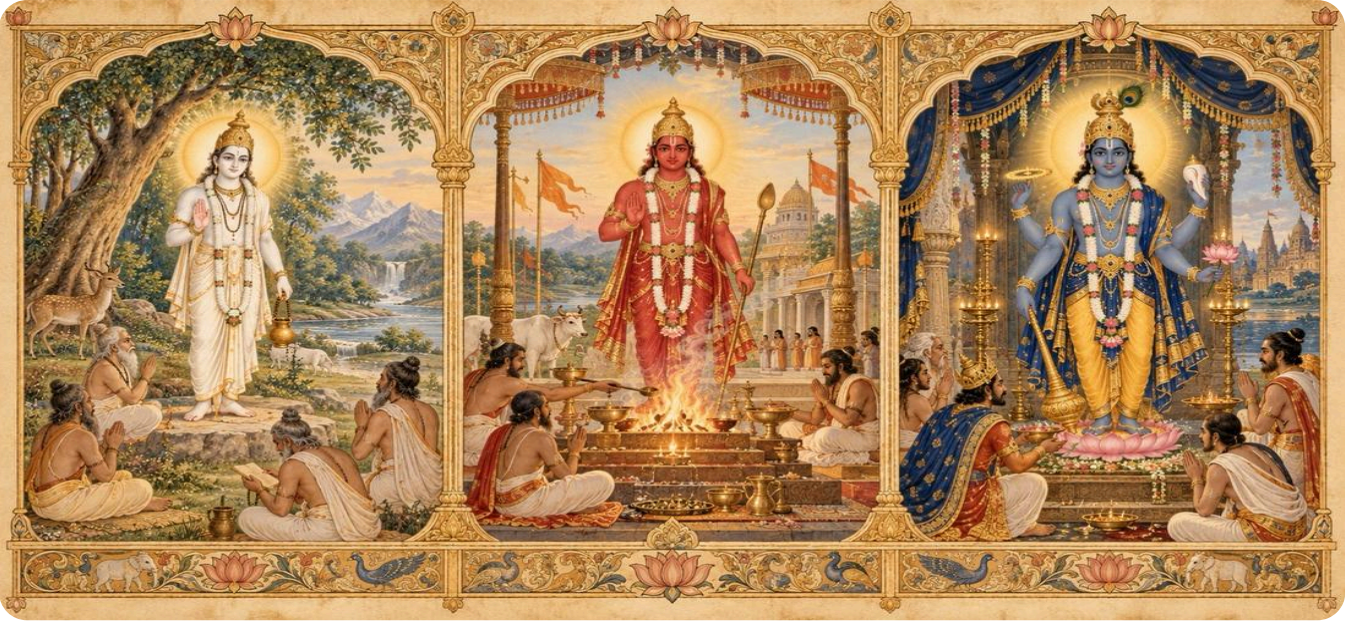
चमस गम्भीरता से वर्णन करते हैं कि किस प्रकार जो भगवान् से विमुख होते हैं — शरीर तथा उसकी सम्पत्ति में आसक्त — अपना सच्चा कल्याण खो देते हैं और अन्धकार में गिरते हैं (श्लोक 15-18)।

राजा निमि पूछते हैं — भगवान् प्रत्येक युग में कैसे पूजे जाते हैं

राजा निमि ने तब पूछा कि किन युगों में, तथा किन रूपों, वर्णों, नामों एवं विहित विधियों से, मनुष्य भगवान् की उपासना करते हैं (श्लोक 19)।

करभाजन बोलते हैं — चार युगों में भगवान्

ऋषि करभाजन ने उत्तर दिया कि भगवान् केशव सत्य, त्रेता, द्वापर तथा कलि युगों में भिन्न-भिन्न वर्ण, नाम तथा रूप धारण करते हैं और भिन्न-भिन्न रीतियों से पूजे जाते हैं। सत्ययुग में भगवान् श्वेत वर्ण के, चतुर्भुज, जटा तथा वल्कल धारण किए, यज्ञोपवीत, माला, दण्ड तथा कमण्डलु लिए होते हैं; उस युग में मनुष्य, शान्त तथा सबके प्रति मैत्रीभाव रखते हुए, ध्यान तथा इन्द्रिय-संयम से उनकी उपासना करते हैं, उन्हें हंस, वैकुण्ठ, धर्म, योगेश्वर तथा परमात्मा आदि नामों से पुकारते हुए। त्रेतायुग में वे रक्त वर्ण के, यज्ञ के रूप में प्रकट होते हैं, और वैदिक विधि से पूजे जाते हैं; वे विष्णु, यज्ञ, पृथ्विर्गर्भ तथा उरुक्रम कहलाते हैं। द्वापरयुग में वे श्याम वर्ण के, पीताम्बर धारण किए, शंख, चक्र, गदा तथा कमल एवं कौस्तुभ मणि धारण किए होते हैं; मनुष्य राजोचित उपकरणों से उनकी उपासना करते हैं, उन्हें वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध रूप में स्तुति करते हुए (श्लोक 20-31)।



करभाजन युगों में भगवान् के बदलते रूपों तथा वर्णों का वर्णन करते हैं — सत्य में श्वेत, त्रेता में रक्त, द्वापर में श्याम — प्रत्येक अपने समय की विहित विधि से पूजित (श्लोक 21-31)।

कलियुग में पावन नाम की महिमा

तब करभाजन हमारे अपने युग पर आए। कलि में, उन्होंने कहा, बुद्धिमान् तथा विचारशील लोग भगवान् की — जो वर्ण में श्याम फिर भी तेजस्वी हैं, प्रत्येक अंग में परिपूर्ण, आभूषणों से अलंकृत तथा अपने पार्षदों एवं आयुधों सहित — मुख्यतः उनके नामों के कीर्तन तथा गान वाले यज्ञों से उपासना करते हैं।

कृष्णवर्णं त्विषाकृष्णं साङ्गोपाङ्गास्त्रपार्षदम् ।

यज्ञैः सङ्कीर्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः ॥ ३२ ॥

kṛṣṇa-varṇaṁ tviṣākṛṣṇaṁ sāṅgopāṅgāstra-pārṣadam yajñaiḥ saṅkīrtana-prāyair yajanti hi su-medhasaḥ

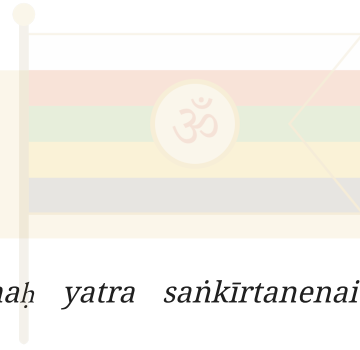
अर्थ: कलियुग में, विवेकशील जन — मुख्यतः उनके नामों के सामूहिक कीर्तन वाले यज्ञों से — उस भगवान् की उपासना करते हैं जो श्याम वर्ण के फिर भी तेजस्वी हैं, और जो अपने अंगों, पार्षदों, आयुधों तथा साथियों सहित प्रकट होते हैं। (स्कन्ध 11, अध्याय 5, श्लोक 32)



कलियुग में, विवेकशील भक्त भगवान् की सर्वोपरि उपासना संकीर्तन से करते हैं — उनके पावन नामों का आनन्दमय, सामूहिक कीर्तन (श्लोक 32)।

करभाजन ने इस युग की उसके गुप्त कोष के लिए प्रशंसा की। विवेकशील आत्माएँ, जो इसका सच्चा गुण पहचानती हैं तथा वस्तुओं का सार ग्रहण करती हैं, वस्तुतः कलियुग की प्रशंसा करती हैं।

कलिं सभाजयन्त्यार्या गुणज्ञाः सारभागिनः ।
यत्र सङ्कीर्तनेनैव सर्वस्वार्थोऽभिलभ्यते ॥ ३६ ॥



*kalim sabhājayanty āryā guṇa-jñāḥ sāra-bhāgināḥ yatra saṅkīrtanenaiva sarva-svārtho
'bhilabhyate*

अर्थ: विवेकशील जन, जो इसका सच्चा मूल्य पहचानते हैं तथा वस्तुओं का सार ग्रहण करते हैं, कलियुग की प्रशंसा करते हैं, क्योंकि इसमें भगवान् के नामों के सामूहिक कीर्तन मात्र से प्रत्येक सच्चा प्रयोजन सिद्ध हो जाता है। (स्कन्ध 11, अध्याय 5, श्लोक 36)

इस संसार में भटकती आत्माओं के लिए, उन्होंने आगे कहा, इससे बड़ा कोई लाभ नहीं।

न ह्यतः परमो लाभो देहिनां भ्राम्यतामिह ।
यतो विन्देत परमां शान्तिं नश्यति संसृतिः ॥ ३७ ॥

*na hy ataḥ paramo lābho dehinām bhrāmyatām iha yato vindeta paramām śāntim naśyati
saṁsṛtiḥ*

अर्थ: इस संसार में भटकती देहधारी आत्माओं के लिए इससे बड़ा कोई लाभ नहीं, जिससे परम शान्ति प्राप्त होती है और जन्म-मृत्यु का चक्र समाप्त हो जाता है। (स्कन्ध 11, अध्याय 5, श्लोक 37)

इतना महान् है यह कोष, करभाजन ने कहा, कि सत्य, त्रेता तथा द्वापर युगों में रहने वाले कलि में जन्म लेने की लालसा करते हैं; और यद्यपि नारायण के भक्त केवल कहीं-कहीं मिलेंगे, वे उस दक्षिण भूमि में अधिक होंगे जो ताम्रपर्णी, कृतमाला तथा पावन कावेरी जैसी पवित्र नदियों से सिंचित है, जिनका जल मनुष्यों को भगवान् वासुदेव के शुद्ध-हृदय भक्त बना देता है।

पूर्ण शरणागति की मुक्ति

अन्ततः करभाजन ने भगवान् में पूर्ण शरण का फल प्रकट किया। जो पूर्ण हृदय से भगवान् की शरण लेता है, प्रत्येक अन्य दायित्व को त्यागकर, वह देवताओं, ऋषियों, अन्य प्राणियों, सम्बन्धियों अथवा पितरों का सेवक या ऋणी नहीं रहता, क्योंकि उस शरण से वह अपने समस्त कर्तव्य एक साथ पूर्ण कर लेता है।

देवर्षिभूताप्तनृणां पितॄणां
न किङ्करो नायमृणी च राजन् ।
सर्वात्मना यः शरणं शरण्यं
गतो मुकुन्दं परिहृत्य कर्तम् ॥ ४१ ॥

*devarṣi-bhūtāpta-nṛṇāṃ pitṛṇāṃ na kiṅkaro nāyam ṛṇī ca rājan sarvātmanā yaḥ śaraṇaṃ
śaraṇyaṃ gato mukundaṃ parihṛtya kartam*

अर्थ: हे राजन्, जो समस्त अन्य कर्तव्यों को त्यागकर पूर्ण हृदय से शरणदाता मुकुन्द की शरण लेता है, वह देवताओं, ऋषियों, अन्य प्राणियों, बन्धुओं, मनुष्यों अथवा पितरों का न सेवक रहता है न ऋणी। (स्कन्ध 11, अध्याय 5, श्लोक 41)



भगवान् को प्रिय इन शिक्षाओं को सुनकर राजा निमि तथा उनके ऋत्विज् आनन्दित होते हैं — और ऋषि नारद, यह सब स्मरण करते हुए, वसुदेव के प्रति अपना स्मरण कोमलता से पूर्ण करते हैं (श्लोक 41-42)।

और यदि ऐसा शरणागत भक्त, जो भगवान् को प्रिय है, कभी कोई दोष कर बैठे, तो उसके हृदय में विराजमान परम भगवान् स्वयं उसे धो देते हैं। भगवान् को इतने प्रिय इन समस्त आचरणों को सुनकर, नारद ने निष्कर्ष दिया, राजा निमि अपने ऋत्विजों तथा गुरुओं सहित आनन्द से भर गए (श्लोक 41-42)।

इस अध्याय की प्रधान शिक्षाएँ

1. भगवान् को जानकर उनकी उपेक्षा करना ही सच्ची हानि है। चमस की चेतावनी अज्ञानी पर नहीं अपितु उन पर पड़ती है जो भगवान् को अपना मूल पहचानकर भी विमुख हो जाते हैं — संकट उपेक्षा में है, असामर्थ्य में नहीं (श्लोक 2-3)।
2. भक्त करुणा के लिए बुलाए गए हैं, तिरस्कार के लिए नहीं। जो भगवान् की महिमा से दूर हैं, वे भक्तों द्वारा दया तथा सहायता के पात्र हैं, कभी तिरस्कार के नहीं — दूसरे की उपेक्षा का उत्तर करुणा है (श्लोक 4)।
3. भगवान् प्रत्येक युग को उपयुक्त रूप में मिलते हैं। सत्य में श्वेत, त्रेता में रक्त, द्वापर में श्याम, वही एक भगवान् प्रत्येक युग की सामर्थ्य के अनुसार अपना रूप, नाम तथा उपासना अनुकूलित करते हैं (श्लोक 20-31)।
4. कलि में पावन नाम ही सर्वोच्च उपासना है। हमारे अपने युग के लिए भगवान् की सर्वोत्तम आराधना *संकीर्तन* से होती है — उनके नामों का सामूहिक कीर्तन — जो सबके लिए खुली उपासना है (श्लोक 32)।
5. कलि में एक गुप्त वरदान है। पावन नाम इतना शक्तिशाली है कि विवेकीजन इसी युग की प्रशंसा करते हैं, और पूर्व युगों की आत्माएँ इसमें जन्म लेने की लालसा करती हैं; भटकती आत्मा के लिए इससे बड़ा कोई लाभ नहीं (श्लोक 36-37)।
6. पूर्ण शरणागति प्रत्येक कर्तव्य को पूर्ण करती है। जो पूर्ण हृदय से मुकुन्द की शरण लेता है वह समस्त अन्य ऋणों से मुक्त हो जाता है, और भगवान् स्वयं अपने शरणागत भक्त के हृदय से प्रत्येक दोष को हर लेते हैं (श्लोक 41-42)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इस अध्याय में समस्त प्रवचन का महान् आश्वासन निहित है। विमुखता के विषय में चमस के गम्भीर वचन डराने के लिए नहीं अपितु जगाने के लिए हैं; और संकट का नाम लेते ही करभाजन सबके लिए द्वार खोल देते हैं। हमने सोचा होगा कि हमारा अपना कठिन युग आध्यात्मिक जीवन के लिए सबसे कठिन होगा — और अनेक दृष्टियों से है भी। फिर भी ऋषि चित्र को पूर्णतः पलट देते हैं: ठीक इसीलिए कि कलि कठिन है, भगवान् ने मार्ग सरल कर दिया है, हमारी पहुँच में समस्त उपासनाओं में सबसे सरल तथा सबसे आनन्दमय रख दी है — उनके नामों का गान। जो सत्य के मनुष्यों ने दीर्घ ध्यान से, और त्रेता तथा द्वापर के मनुष्यों ने विस्तृत विधियों से पाया, वह हम अपने हृदय तथा अपने स्वर खोलकर पा सकते हैं। इसमें एक सुन्दर विनम्रता है। पावन नाम हमसे केवल सच्चाई माँगता है; यह विद्वान् तथा अनपढ़, शक्तिशाली तथा दरिद्र — सबका समान रूप से है।

एक दैनिक भक्ते-अभ्यास

आज, करभाजन की शिक्षा के भाव में, *संकीर्तन* के लिए कुछ मिनट लें — भगवान् के पावन नामों का कीर्तन। अकेले अथवा परिवार के साथ, धीरे तथा स्थिर भाव से गाएँ या दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” नामों को बिना जल्दबाज़ी के उठने दें, और अपना ध्यान कोमलता से उन पर टिका रहने दें। इस सरल अभ्यास में आप वही उपासना ग्रहण करते हैं जिसकी भागवत हमारे युग के लिए संस्तुति करता है — कलियुग में छिपा वह कोष, जिससे, ऋषियों की प्रतिज्ञा है, परम शान्ति प्राप्त होती है और हृदय मुकुन्द के चरणों की ओर खिंच आता है।

उपसंहार

एकादश स्कन्ध का पंचम प्रवचन राजा निमि तथा नौ योगीन्द्रों के महान् संवाद को उसके समापन तक पहुँचाता है। ऋषि चमस, गम्भीर करुणा के साथ, उन आत्माओं की हानि की चेतावनी देते हैं जो भगवान् को जानकर भी विमुख हो जाती हैं, भक्तों को तिरस्कार नहीं अपितु दया के लिए बुलाते हैं। ऋषि करभाजन तब प्रकट करते हैं कि किस प्रकार वही भगवान् युग-युग में उपयुक्त रूपों में पूजे जाते हैं — और अपने उत्तर को हमारे अपने समय की महिमा से मुकुटित करते हैं: कलियुग में, भगवान् की सर्वोत्तम आराधना उनके पावन नामों के सामूहिक कीर्तन से होती है, एक ऐसा कोष जो इतना महान् है कि विवेकीजन इसी युग की सबसे अधिक प्रशंसा करते हैं। प्रवचन वहीं समाप्त होता है जहाँ उसे होना चाहिए, पूर्ण शरणागति में — जो आत्मा मुकुन्द की शरण लेती है वह प्रत्येक ऋण से मुक्त हो जाती है, और भगवान् स्वयं उसके हृदय की रक्षा करते हैं। यह सब सुनकर, राजा निमि आनन्दित हुए, और नारद ने कोमलता से अपना स्मरण वसुदेव की ओर लौटाया। इस प्रकार योगीन्द्रों का उपदेश पूर्ण होता है, जो आगे स्थित उद्धव-गीता के गूढ़तर ज्ञान का एक तेजस्वी द्वार है।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य वाणी हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।



सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, *श्रीमद्भागवत महापुराण* (अंग्रेज़ी, सम्पूर्ण), एकादश स्कन्ध, अध्याय 5, पृष्ठ 533–537।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • बिस्वा सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पंडित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र की आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं तथा उनके अर्थ सार-रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद अथवा टीका की पुनरावृत्ति नहीं है। किसी भी प्रकाशक से सम्बद्धता अथवा समर्थन का कोई संकेत नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-skandh-11-adhyay-5-narad-vasudev-upadesh-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञानम् • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

